जनसत्ता

17 जून, 2019

अर्थव्यवस्था का लक्ष्य

नीति आयोग की संचालन परिषद की बैठक में प्रधानमंत्री ने जो संकल्प दोहराए, अगर उन पर संजीदगी से अमल हो तो अर्थव्यवस्था को लक्ष्य तक पहुंचाने में काफी हद तक कामयाबी मिल सकती है। प्रधानमंत्री ने अर्थव्यवस्था को अगले पांच सालों में पांच हजार अरब डॉलर तक पहुंचाने का लक्ष्य रखा है। उन्होंने कहा कि यह लक्ष्य बड़ा है, पर सब साथ मिल कर प्रयास करें, तो इसे हासिल करना कठिन नहीं है। इसके लिए उन्होंने सभी राज्यों से सहयोग की अपील की। इसके लिए उन्होंने राज्यों का निर्यात बढ़ाने, प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि करने, मूलभूत ढांचे के विकास में तेजी लाने, गरीबी, बेरोजगारी आदि जैसी समस्याओं पर काबू पाने की दिशा में रणनीति तैयार करने पर बल दिया। आम चुनाव के बाद सरकार ने सबसे पहले अपना ध्यान अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने पर केंद्रित किया है। इसके पहले सभी विभागों की बैठक कर प्रधानमंत्री ने अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने की दिशा में संभावित प्रयासों पर विचार-विमर्श के लिए दो समितियों का गठन किया, जिसमें अलग-अलग विभागों के मंत्री शामिल हैं। रिजर्व बैंक को भी इस दिशा में नीतियां बनाने को कहा गया है। इसके तहत बाजार में पूंजी का प्रवाह बढ़ाने के मकसद से पिछले दिनों उसने अपनी रेपो दर में पच्चीस आधार अंक की कटौती भी की।

दरअसल, पिछले कुछ समय से देश की विकास दर संतोषजनक नहीं है। इसमें नोटबंदी, जीएसटी जैसे कुछ फैसलों का भी प्रभाव देखा गया है। सकल घरेलू उत्पाद की दर नीचे गई है। इसमें औद्योगिक क्षेत्र की भागीदारी संतोषजनक नहीं है। इसका असर यह हुआ है कि बेरोजगारी पर काबू पाने में कामयाबी नहीं मिल पाई है। फिर कुछ बैंकों के बट्टे खाते में काफी वृद्धि हुई है। बड़े कर्जों की वसूली नहीं हो पाई, कई बड़े कर्जदार धोखे से बैंकों की पूंजी सोख कर देश छोड़ गए। फिर अपेक्षित विदेशी निवेश भी नहीं आ पाया। महंगाई पर काबू पाने की मंशा से कई मामलों में सरकार को राजस्व में कटौती करनी पड़ी। शिक्षित और कुशल युवाओं को प्रोत्साहन देने तथा देश में उत्पादन बढ़ाने की मंशा से भारी पैमाने पर कर्ज बांटे गए, पर उसके नतीजे अभी तक नजर नहीं आ रहे हैं। इन तमाम बातों की वजह से अर्थव्यवस्था का रुख नीचे की तरफ बना हुआ है। इसे लेकर विपक्ष लगातार हमलावर रहा है। इसलिए सरकार ने अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने की दिशा में सबसे पहले ध्यान केंद्रित किया है और बड़ा लक्ष्य सामने रखा है, तो यह अच्छी बात है।

अर्थव्यवस्था की मजबूती सभी क्षेत्रों के सम्मिलित सहयोग से आती है। उसमें कोई भी क्षेत्र कमजोर रह जाता है, तो वह विकास दर को ऊपर नहीं बढ़ने देता। इसलिए केंद्र सरकार ने सभी विभागों, देश की सभी राज्य सरकारों को इसमें सहभागी बनाने की कोशिश की है, तो बेहतर नतीजों की उम्मीद बनती है। जीएसटी जैसे फैसलों के नतीजे अब नजर आने शुरू होंगे। कौशल विकास और मेक इन इंडिया जैसे कार्यक्रमों के परिणाम भी अब दिख सकते हैं। पर इसके लिए औद्योगिक क्षेत्र पर ध्यान केंद्रित करने के साथ-साथ अंदरूनी और बाहरी बाजार के आकार में विस्तार पर भी गंभीरता से ध्यान देना होगा। निर्यात के मामले में हम लंबे समय से पीछे हैं, अगर इसकी दर में बढ़ोतरी होती है, तो औद्योगिक क्षेत्र का विकास होगा और रोजगार की नई संभावनाएं बनेंगी। इस तरह सरकार जिन समस्याओं से पार पाना चाहती है, उसमें कामयाबी मिल सकती है।

बीमारी और सवाल

इक्कीसवीं सदी के भारत में अगर दिमागी बुखार जैसी बीमारी से बच्चे रोजाना दम तोड़ते रहें और सरकार हाथ पर हाथ धरे बैठी रहे तो इससे ज्यादा शर्मनाक कुछ नहीं हो सकता। बिहार में पिछले दस दिन में दिमागी बुखार, जिसे जापानी बुखार भी कहा जाता है, से अब तक नब्बे बच्चों की मौत हो चुकी है। बच्चों की मौतों का सिलसिला थम नहीं रहा। मौतों का यह आंकड़ा तो उन बच्चों का है जो अस्पताल में भर्ती थे और इलाज के दौरान दम तोड़ दिया। लेकिन अगर ऐसी कोई वायरस संक्रमण जन्य बीमारी फैली है तो इससे पीड़ित बच्चों की संख्या तो काफी ज्यादा ही होगी। चिंता की बात तो यह है कि पिछले दस दिनों के भीतर डॉक्टर यह भी पता नहीं लगा पाए हैं कि आखिर इस बुखार का कारण क्या है। राज्य के करीब बारह जिले इस बुखार की चपेट में हैं। मुजफ्फरपुर के अस्पतालों में ढाई सौ से ज्यादा बच्चे भर्ती हैं। ज्यादातर पीड़ित बच्चे ग्रामीण इलाकों के हैं। राज्य में बच्चों की मौतों का सिलसिला कई दिनों से चल रहा है लेकिन सरकार कई दिन बाद हरकत में आई और राज्य के स्वास्थ्य मंत्री शुक्रवार को पहली बार मुजफ्फरपुर पहुंचे। यह बिहार सरकार की संवेदनहीनता को बताने के लिए काफी है।

बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश में जापानी बुखार हर साल फैलता है। लेकिन इस बार मौतों का आंकड़ा जिस तेजी से बढ़ा है, वह राज्य सरकार की घोर लापरवाही का ही परिणाम है। ये बच्चे बुखार से कम, सरकार के भ्रष्ट और लाचार तंत्र के कारण ज्यादा मर रहे हैं। सवाल तो यह उठता है कि जब हर साल जापानी बुखार फैलता है तो उसे रोकने के स्थायी समाधान क्यों नहीं तलाशे जाते। पिछली घटनाओं से सीख क्यों नहीं ली जाती? जापानी बुखार के प्रकोप से उत्पन्न हालात का जायजा लेने के लिए जो केंद्रीय टीम बिहार के दौरे पर गई थी, उसकी रिपोर्ट चौंकाने वाली है। केंद्रीय टीम ने साफ कहा कि इस बीमारी से निपटने के लिए राज्य सरकार के पास संसाधनों की जो स्थिति है, वह संतोषजनक नहीं है। इस तरह की बीमारियों से निपटने के लिए जिस तरह का ट्रॉमा सेंटर, सघन चिकित्सा कक्ष (आइसीयू), विशेषज्ञ डॉक्टर और नर्स होने चाहिए, वे नहीं हैं। अस्पतालों की हालत यह है कि दूसरे विभागों और कमरों में मरीजों को ठूंस कर काम चलाया जा रहा है। स्थिति बता रही है कि आमजन को बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं मुहैया करा पाने में हमारी सरकारें किस तरह नाकाम साबित हो रही हैं।

सवाल है कि सरकारी अस्पताल इतने सुविधा-विहीन क्यों हैं, जहां जरूरत के मुताबिक न बिस्तर हैं, न आइसीयू, न पर्याप्त विशेषज्ञ डाक्टर और नर्सिंग स्टाफ है। हालत बता रही है कि अस्पताल खुद ही गंभीर बीमारी से संक्रमित हैं, जिसका इलाज करने की ताकत और इच्छा सरकार के पास नहीं बची है। इसका मतलब तो यह हुआ कि बजट में स्वास्थ्य क्षेत्र के लिए जो पैसा रखा जाता है वह अस्पतालों, स्वास्थ्य सेवाओं पर तो खर्च ही नहीं हो रहा! बिहार में 1977 में पहली बार इस बीमारी का पता चला था। तब से लेकर अब तक एक लाख से ज्यादा बच्चों की जान चुकी है। अगर चार दशक में भी हम बीमारी का कारण नहीं खोज पाएं तो इससे बड़ी नाकामी क्या हो सकती है। अगर समय रहते कदम उठाए गए होते और बीमारी का पता लगाने के लिए शोध शुरू हो जाता तो आज कई घरों के चिराग बुझने से बचाए जा सकते थे।

कल्पमेधा

प्राय: संकट काल विजय के साथ ही आता है।
-नेपोलियन

कैसे दूर होगी गरीबी

बिभा त्रिपाठी

कौन गरीब है, कुल कितने गरीब हैं, कहां गरीब चिन्हित किए जाते हैं, गरीबी का आंकड़ा बढ़ रहा है या घट रहा है, और अंततः गरीब होना क्या मायने रखता है, ये कुछ ऐसे अनुत्तरित प्रश्न हैं जिनका उत्तर ढूंढ़े जाने की जरूरत है। गरीब कभी अपनी गरीबी के लिए स्वयं जिम्मेदार नहीं होता, बल्कि वह समाज में व्याप्त असमानताओं और अवसरों के अभाव का शिकार है।

आज के विकृत पूंजीवादी वैश्विक परिदृश्य में गरीबी एक सापेक्ष शब्द हो चुका है। भारत को सदा से ही एक गरीब देश की संज्ञा से नवाजा जाता रहा है। इससे ऊपर यदि दक्षिण एशियाई देशों तक गरीबी को विस्तारित किया जाए तो आंकड़े बताते हैं कि विश्व के आधे से ज्यादा गरीब दक्षिण एशियाई देशों में रहते हैं। इसीलिए 'साउथ एशिया अलायंस फॉर पावर्टी इरेडिकेशन' की साधारण महासभा के प्रथम सम्मेलन में श्रीलंका के प्रतिनिधि ने अपने उद्घाटन भाषण में कहा था कि हम गरीब नहीं हैं, यह तो सदैव पश्चिम की ओर से ही कहा जाता रहा है कि हम गरीब हैं। कहने का तात्पर्य है कि गरीबी को परिभाषित और निर्धारित करने के वैश्विक एवं राष्ट्रीय प्रयासों से गरीबों का कोई लेना-देना नहीं है। चाहे तेंदुलकर कमेटी द्वारा खरीद क्षमता के आधार पर परिभाषित गरीबी हो या फिर डा. रंगराजन समिति द्वारा परिभाषित गरीबी हो, लब्बोलुआब यह है कि क्या गरीबी रेखा के ऊपर की सारी आबादी खुशहाल है, संपन्न है? संतुष्ट है? और यदि नहीं तो फिर इस हाय-हाय, किच-किच का क्या मतलब है?

अगर विश्व के समृद्धतम देश संयुक्त राज्य अमेरिका की चर्चा होती है तो आम धारणा यह बनती है कि यह देश न सिर्फ सर्वशक्तिशाली है, वरन सबसे समृद्धशाली भी है। परंतु गरीबी का दुष्चक्र वहां भी अर्थशास्त्रियों की नाक का नकेल बनता है। करोड़ों अमेरिकी रोटी, कपड़ा और मकान जैसी मूलभूत सुविधाओं से वंचित हैं। बाजारवाद के चरमोत्कर्ष के इस काल में ऐसे करोड़ों लोगों के साथ शिक्षा, रोजगार, व्यवसाय, स्वास्थ्य एवं सुरक्षा के नाम पर गहरे विभेद का सामना करना पड़ता है।

कौन गरीब है, कुल कितने गरीब हैं, कहां गरीब चिन्हित किए जाते हैं, गरीबी का आंकड़ा बढ़ रहा है या घट रहा है, और अंततः गरीब होना क्या मायने रखता है, ये कुछ ऐसे अनुत्तरित प्रश्न हैं जिनका उत्तर ढूंढ़े जाने की जरूरत है। गरीब कभी अपनी गरीबी के लिए स्वयं जिम्मेदार नहीं होता, बल्कि वह समाज में व्याप्त असमानताओं और अवसरों के अभाव का शिकार है। हालांकि कई अर्थशास्त्रियों का मानना है कि गरीब, सुस्त और आलसी होते हैं और उनका वर्तमान जीवन स्तर उन्हें गरीब बनाए रखता है। अतः गरीबी उन्मूलन हेतु जब भी नीतियों एवं कार्यक्रमों का निर्धारण करना हो, उक्त तथ्यों को ध्यान में रखना नीतिगत सफलता की एक पूववर्ती शर्त मानी जाएगी।

गरीब और अमीर का निर्धारण करने वाली गरीबी रेखा कितने तर्कसंगत आधारों पर निर्मित की जाती है, यह प्रश्न अभी तक अनुत्तरित है। चूंकि गरीबी का एक गंभीर दुष्परिणाम शक्तिविहीनता भी है जिसमें एक गरीब को असहाय और बेचारा माना जाता है। उसके साथ भेदभाव पूर्ण व्यवहार किया जाता है। परिणामस्वरूप उसके शरीर, मन और जीवन पर गरीबी की काली छाया मंडराती रहती है और वह असमय ही काल का ग्रास बन जाता है।

गरीब की दशा पर राजनीति की रोटी सेंकने वालों की अपनी अलग ही दुनिया है। एक राजनेता का यह बयान कि 'गरीबी एक मानसिक दशा है', विचारणीय है। ऐसे बयानों से जेहन में यह लाइन सहसा ही आ जाती है कि 'एक शहंशाह ने बनवा के हसीं ताजमहल हम गरीबों का उड़ाया है मजाक।' निहितार्थ यह है कि हमने गरीब और गरीबी को समझा तो बहुत, लेकिन उसे दूर करने की जगह इसे हास्य और व्यंग्य का, हंसी-ठिठोली का विषय बना डाला। कभी हृदयविदारक, मर्माहत करने वाली कविता के माध्यम से तो कभी उदारवादी आर्थिक नीतियों के क्रियान्वयन से।

मूल रूप से सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक लक्ष्य, संस्थागत साधनों का अभाव और सरकारी नीतियां ही कमोवेश रूप से गरीबी के मूल कारक है। अतः इनमें जब तक सुधार नहीं होगा तब तक चाहे उत्तर प्रदेश का संदर्भ हो, चाहे अमेरिका या इंग्लैंड का, गरीबों की दशा में सकारात्मक परिवर्तन संभव नहीं है। गरीबी को मानव अधिकारों के उल्लंघन का कारण एवं प्रभाव दोनों माना जाता है। इसलिए मानव अधिकारों एवं मौलिक अधिकारों के साथ राज्य के नीति-निर्देशक तत्त्व संबंधी समस्त दस्तावेजी प्रावधानों को गरीबों की दशा के संदर्भ में उद्धरित किया जाता है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा न्याय की विशुद्ध विधिक व्याख्या को 'सामाजिक न्याय' की तरफ केंद्रित करने की मंशा का भान उसके द्वारा बंधुआ मजदूरी, बाल श्रमिक, असंगठित श्रमिक, परिव्रजन करने वाले श्रमिक, शरणार्थी, वेश्या इत्यादि के संदर्भ में दिए गए निर्णयों से होता है।

नीतियों एवं कार्यक्रमों के क्रम में देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू के अनुसार भारत की सेवा का तात्पर्य करोड़ों पीड़ित व्यक्तियों की सेवा से है। नीतियां ऐसी हों जो गरीबी, अज्ञानता, बीमारी एवं अवसरों की असमानता को खत्म करने वाली हों, जिनसे हर व्यक्ति की आंख का आंसू पोछा जा सके। 'गरीबी हटाओं' और 'गरीबी उन्मूलन' जैसे नारों के अन्तर्गत विभिन्न पंचवर्षीय योजनाएं बनाई गईं और राष्ट्रीय रोजगार कार्यक्रम, मनरेगा, अंत्योदय, जननी सुरक्षा योजना, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, बाल्मीकि आंबेडकर योजना, स्वर्ण जयंती ग्राम स्व-रोजगार योजना जैसी तमाम योजनाओं को सरकार के द्वारा संचालित किया गया है।

गरीबी उन्मूलन के लिए सबसे जरूरी है कि इसके सकारात्मक प्रयासों को चरणबद्ध तरीके से चलाया जाना चाहिए। मसलन, सबसे पहले बच्चों के लिए शिक्षा एवं उद्यमिता प्रशिक्षण का कार्यक्रम चलाना चाहिए। माता-पिता को योग्यतानुसार विभिन्न लघु उद्योगों में प्रशिक्षण प्रदान कर उन्हें स्वाबलंबी बनाने की दिशा में कार्य करना चाहिए। जन्म एवं मृत्यु का अनिवार्य पंजीकरण करवा कर उन्हें सामाजिक सुरक्षा की गारंटी प्रदान करनी चाहिए। इसके अलावा अन्य ऐसे सभी उपाय जो विकल्प के रूप में अब तक सुझाए गए हैं, उनका छोटे-छोटे समूहों पर प्रयोग करना चाहिए और प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर उनका आगे क्रियान्वयन करना चाहिए। सबसे महत्त्वपूर्ण एवं कारगर कदम के रूप में कुपोषण निवारण योजनाओं को लागू किए जाने की जरूरत है। यदि पूरा देश एकजुट होकर गरीबी उन्मूलन के लिए उसी प्रकार से आंदोलित हो जाए, जैसा कि स्वाधीनता संग्राम के दौरान हुआ था तो वह दिन दूर नहीं जब उत्तर प्रदेश से अमेरिका तक पूरा विश्व यह भूल जाएगा कि गरीबी रेखा नाम की भी कोई चीज होती है।

गरीबी को परिभाषित और पुनर्परिभाषित करने का जो प्रायोजित सरकारी दायित्व निभाया जाता है वह इसलिए क्योंकि सरकार की वास्तविक ढांचागत स्थिति में परिवर्तन संभव नहीं है। गरीबी एक जटिल और दुरूह संकल्पना है। यदि दार्शनिक दृष्टिकोण से गरीबी की संकल्पना को समझ कर उसका आकलन किया जाए तो यह बात बखूबी स्पष्ट हो जाती है कि केवल आर्थिक दृष्टिकोण से गरीबी की व्याख्या नहीं की जा सकती, बल्कि उसका विस्तार बहुपक्षीय एवं बहुआयामी है। आज यह कहना कहीं से गलत नहीं है कि यदि हम शिक्षित नहीं है तो भी गरीब हैं, यदि दीक्षित नहीं है तो भी गरीब हैं। यदि नैतिक मूल्यों के अनुगामी नहीं है तो भी गरीब हैं और यदि मजहबी, जातिवादी और संकुचित मानसिकता के पोषक रूढ़िवादी हैं तो भी गरीब हैं। अतः आवश्यकता है आत्मावलोकन की और जब हम सभी अपना आत्मावलोकन करेंगे, तभी गरीबी के बदनुमा दाग को मिटा पाने में कामयाब हो पाएंगे। चुनौती इस बात की है कि विकल्प तलाशा जाए। अन्यथा गरीबों की गरीबी एक ऐसे चक्रवाती तूफान की तरह आएगी जिसमें सब कुछ खत्म हो जाएगा। आवश्यकता इस बात की है कि समय रहते ही हम चेत जाएं और सोच समझ कर नीतियों का निर्धारण करें।

सिनेमा के सहारे

एकता कानूनगो बक्षी

दुनिया मेरे आगे

'साहित्य और सिनेमा हमारे समाज का दर्पण है'। यह वाक्य हमें स्कूली दौर में लिखे निबंध की याद दिला देता है। हालांकि उस दौर में हम सिनेमा की बारीकियों से अनभिज्ञ होते हैं। सिनेमा का इतिहास, फिल्म बनने की प्रक्रिया, यहां तक कि नायक-नायिका की अभिनय कला और उनके संघर्षों को भी हम नहीं समझ पाते थे। फिर भी निर्धारित शब्दों की सीमा में हमारा निबंध तैयार हो जाता था जो परीक्षा में हमारे अंक सुनिश्चित कर देता है। जिस विषय को शिक्षा प्रणाली में इतना महत्त्व दिया जाता है और उस पर निबंध लिखवाया जाता है, उसका जीवन में कितना व्यावहारिक उपयोग रहता है!

मुझे लगता है कि उसके लिए उस वक्त विद्यार्थियों द्वारा अपेक्षित शोध और मेहनत नहीं की जाती। एकमात्र उद्देश्य परीक्षा में अंक अर्जित करना ही रहता है। वाकई सिनेमा और उसका इतिहास क्या है, वह कैसे बनता है, कैसे कोई इंसान अपने मूल रूप से हट कर एकदम अलग किरदार निभाता है और उसके भीतर तक समाहित हो जाता है, कैसे कहानियां रची जाती हैं, कैसे किसी फिल्म के डायलॉग अमर हो जाते हैं! बिना यह सब जाने और कई तरह की फिल्में देखे बिना हम कैसे उस पर सटीक निबंध लिख सकते हैं।

मेरा मानना है कि फिल्में भी अब पाठ्यक्रम का एक जरूरी हिस्सा बनें। इसमें अलग-अलग समय और देश में बनी अच्छी फिल्में दिखाई जाएं। उस पर सामाजिक, आर्थिक के साथ राष्ट्रीय मुद्दों का विश्लेषण किया जाए। कई विद्यालयों में पहले और आज भी फिल्में दिखाई जाने की परंपरा रही है, पर अधिकतर उसका मकसद महज मनोरंजन ही रहा है। सामान्य विद्यालय आज भी स्तरीय सिनेमा की पहुंच से काफी दूर दिखाई देते हैं। हालांकि प्रबंधन की पढ़ाई में 'लगान' जैसी कुछ फिल्मों के संदर्भों का प्रयोग होता रहा है, लेकिन इसे पर्याप्त नहीं कहा जा सकता।

फिल्मों और उनमें बताई-दिखाई बातों का गहरा असर इंसान के मन-मस्तिष्क में प्रत्यक्ष रूप से होता है। सिनेमा के पास पर्याप्त अवसर होते हैं, किसी भी बात को अभिव्यक्त करने के। सिनेमा के जरिए हम अपने जैसे ही किरदारों को बोलते-सुनते अलग-अलग परिस्थितियों से उलझते-संभलते देख सकते हैं। हम समाज में उपस्थित अलग-अलग चरित्र के लोगों का अध्ययन कर सकते हैं। हम भिन्न-भिन्न क्षेत्र की संस्कृति, विचारधारा और वहां के लोगों के रोजमर्रा के जीवन और संघर्षों को देख सकते हैं। समाज में प्रचलित विभिन्न भाषाओं और भोजन के बारे में अपनी जानकारी बढ़ा सकते हैं। अलग-अलग देशकाल की खूबसूरती और तत्कालीन कुरीतियों को समझकर संवेदशील और बेहतर इंसान बन सकते हैं। इसके अलावा, स्वस्थ मनोरंजन जीवन को प्रफुल्लता से तो भर ही देता है।

हमारे जीवन के कुछ दौर काफी संघर्षपूर्ण होते हैं। जरूरी नहीं कि हमारे साथ हमेशा कोई ऐसा साथी मौजूद हो जो हमारा उत्साहवर्धन और मार्गदर्शन करता रहे। ऐसे में किताबें हमारी सबसे अच्छी दोस्त होती हैं, लेकिन फिल्में भी हमारे अकेलेपन को काफी हद तक कम कर देती हैं। खासकर नई टेक्नोलॉजी के इस दौर में हम अपने कंप्यूटर और टीवी पर भी घर बैठे मनचाही फिल्में देख सकते हैं। अपने बहुमूल्य समय को लंबे समय तक सिर्फ बेकार के कामों में व्यर्थ गंवाने से आगे चल कर अवसाद की स्थिति पैदा हो सकती है।

ऐसे कई उदाहरण हमारे समाज में मौजूद हैं, जहां फिल्में देख कर और अपने मनपसंद कलाकारों से प्रेरित होकर लोगों का जीवन बदला है। मैं अपनी एक दादी को जानती हूं जो दादा के देहांत के बाद काफी निष्क्रिय हो गई थीं। उनके परिवार के जागरूक सदस्यों ने थोड़ा अध्ययन करके कुछ फिल्मों की सूची बनाई और रोज उन्हें दोपहर में एक फिल्म दिखाई गई। ऐसे में दादी की बोरियत तो दूर हुई ही, उनके अंदर उन फिल्मों से प्रेरित होकर एक बार फिर स्फूर्ति आ गई और उन्होंने आगे के जीवन को पूरी तरह से स्वीकार कर फिर से जीवन की दौड़ लगाते ही अपनी नई सफल पारी की शुरुआत की। विद्यार्थियों और युवाओं के लिए भी अच्छा सिनेमा बहुत जरूरी है, ताकि वे असल जीवन के संघर्ष और हकीकत से समय रहते रूबरू हो सकें और कम उम्र में आत्महत्या की प्रवृत्ति या अन्य मनोरोगों से दूर रह स्वस्थ और प्रयत्नशील बने रह सकें। ऐसी कई फिल्में हैं जो गिर कर उठना और संघर्ष करते रहना सिखाती हैं और साहसी भी बनाती हैं। कुछ फिल्में सबके साथ बैठ कर देखना चाहिए, जिसमें पूरा परिवार साथ-साथ हंस पाए और परिवार में प्रफुल्लता का झरना प्रवाहित होता रहे।

यह भी जरूरी है कि थोड़ा शोध करके अच्छी और सार्थक फिल्में देखी जाएं। एक अच्छी फिल्म हमको बस कुछ घंटे का मनोरंजन ही नहीं देती, वह कई शक्लों में हमारे साथ जीवन भर रहती हैं। हमारी सोच, हमारे हौसले, शब्दों को नई उड़ान देती हैं। हमारी कोशिश होनी चाहिए कि कुछ नायाब फिल्में देख सकें, जो हमें नया नजरिया और सही दिशा दे... एक सच्चे हितचिंतक की तरह जीवन को इंद्रधनुषी रंगों से भर दे।

आतंकवाद का दंश

किर्गिस्तान की राजधानी बिश्केक में शंघाई सहयोग संगठन (एससीओ) के शिखर सम्मलेन में भारत के प्रधानमंत्री ने चीन और रूस के राष्ट्रपति से द्विपक्षीय बातचीत में साफ कह दिया है कि पाकिस्तान पहले आतंकवाद बंद करे तभी भारत उससे बात करेगा। भारत हमेशा से एक शांतिप्रिय देश रहा है और उसने कभी किसी भी मुल्क के खिलाफ हिंसक या युद्ध जैसा कदम नहीं उठाया। लेकिन आज़ादी के बाद से ही आतंकवाद का दंश भारत झेलता आया है। आजादी के बाद से ही पाकिस्तान से कश्मीर मे घुसपैठ शुरू हो गई थी। पाकिस्तान ने कबाइलियों द्वारा हिंसा करवा कर कश्मीर को भारत से छीनने की कोशिश की थी। मुंबई का आतंकी हमला आज भी देश के लोगो को दिल दहला देता है। पुलवामा में आतंकवादी हमले के बाद से भारत और पाकिस्तान की रिश्तों में और खटास आ गई। आतंकवाद केवल भारत का मुद्दा नहीं हैं बल्कि यह एक वैश्विक समस्या है क्योंकि अमेरिका, यूरोप, फ्रांस जैसे कई बड़े देश आतंकवाद का दंश झेल रहे हैं, इसलिए दुनिया के देशों ने अपने आपसी गिले-शिकवे मिटा कर आतंकवाद के खिलाफ एकजुट होकर लड़ाई लड़नी चाहिए।

● *निशांत महेश त्रिपाठी, नागपुर*

भारत का दबदबा

शंघाई सहयोग संगठन (एससीओ) में चीन, रूस के बाद भारत तीसरा सबसे बड़ा और प्रभावशाली देश है। एससीओ इस समय दुनिया का सबसे बड़ा क्षेत्रीय संगठन है। भारतीय हितों की जो चुनौतियां हैं, चाहे वह आतंकवाद हो, या फिर ऊर्जा की आपूर्ति या प्रवासियों का मुद्दा हो, ये सभी मुद्दे भारत और एससीओ दोनों के लिए अहम हैं और इन चुनौतियों के समाधान की कोशिशें भी हो रही हैं। ऐसे में भारत के जुड़ने से एससीओ और भारत दोनों को ही लाभ हुआ है। जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए भारत की प्रतिबद्धता हमारे दर्शन में निहित है, जो पृथ्वी को माता के रूप में मानता है। आज, भारत अक्षय ऊर्जा का छठा और सौर ऊर्जा का पांचवां बड़ा उत्पादक है। अंतरराष्ट्रीय सौर गठबंधन भारत की संयुक्त पहल है। भारत ने एससीओ की सभी गतिविधियों में सकारात्मक योगदान दिया है। महत्त्वपूर्ण योजनाओं जैसे चाबहार पोर्ट, इंटरनेशनल नॉर्थ साउथ ट्रांसपोर्ट कॉरिडोर आदि इसके उदाहरण हैं। भारत ने 2017 में काबुल और कंधार तथा नई दिल्ली और मुंबई के बीच एयर फ्रेट कॉरिडोर का भी संचालन किया है जो एससीओ में भारत के बढ़ते प्रभाव को दर्शाता है।

● *नितिन त्यागी, मेरठ*

बेलगाम अपराधी

उत्तर प्रदेश में इन दिनों अपराधी बेलगाम हैं। पूरे देश में इस प्रदेश में कानून-व्यवस्था की स्थिति सबसे गंभीर है। कुछ महीने पहले हुई बुलंदशहर हिंसा का मामला हो, या हाल में हुई ट्विंक्ल शर्मा की हत्या। ऐसे ना जाने कई गंभीर मामले हैं जिनका शोर उत्तर प्रदेश के शहरों में सुनाई देता है। यह चिंता का विषय है कि एक समय में देश को प्रधानमंत्री देने वाला प्रदेश अपराधियों का गढ़ बन हुआ है। नेताओं का बाहुबल, पुलिस की दबंगई और अधिकारियों की निरंकुशता और संवेदनहीनता नागरिकों का जीवन नरक बना रही है। ऐसे अपराध देश में युवाओं को अपने लक्ष्य से भटका रहे हैं और उनकी जिंदगी अंधेरे में धकेल रहे हैं।

● *रोशन कुमार, जमशेदपुर*

पर्यटक और प्रदूषण

भारतीय उपमहाद्वीप इन दिनों तप रहा है। चिलचलाती गर्मी से बचने के लिए लोग हिमालय की ओर निकल पड़े है। ये वादियां और घाटियां जम्मू एवं कश्मीर, कुल्लू- मनाली, बद्रीनाथ-केदारनाथ, नेपाल हिमालय, सिक्किम हिमालय, भूटान हिमालय या अरुणाचल प्रदेश का हिमालयी क्षेत्र हो सकता है। लेकिनइन दिनों एक सबसे बड़ी समस्या जो पर्यटकों को परेशान कर रहीहै वह प्रदूषण की है। पर्यटकों को ढोने वाले वाहन काला धुंआ फैला रहे हैं। पहाड़ों पर ऑक्सीजन की कमी वैसे ही होती है। ऐसे में प्रदूषण और ज्यादा समस्या बढ़ा देता है। यह क्षेत्र पूरी तरह से वनस्पति विहीन है। एसे में यह वायु प्रदूषण ज्यादा जानलेवा साबित हो रहा है। इसके अलावा पर्यटकों द्वारा फैलाई जाने वाली गंदगी भी बड़ी समस्या बनी हुई है। सरकार और प्रशासन को इस समस्या पर तत्काल ध्यान देना चाहिए।

● *राजेश कुमार महतो, आसनसोल*

बढ़ती आबादी और समस्याएं

भारत में जनसंख्या वृद्धि बहुत ही भयावह स्थिति पर पहुंच चुकी है। अगर यही स्थिति रही तो वह दिन दूर नहीं जब हम बुनियादी जरूरतों के लिए भी तरसने लगेंगे। यह सही बात है कि सरकार पूरी ईमानदारी से एक सौ तीस करोड़ देशवासियों के लिए विभिन्न योजनाएं चला रही है, लेकिन जब तक कठोर जनसंख्या नियंत्रण कानून नहीं बनाया जाएगा तब तक ये योजनाएं उतनी प्रभावी नहीं होगी। आज हमारे देश में पानी की कितनी भारी किल्लत है। सरकारें और जागरूक संगठन पानी बचाने के लिए तमाम जन जागरण अभियान चलाते हैं, लेकिन बड़ी आबादी की पूर्ति के लिए जल का दोहन तो होता रहेगा। वह दिन दूर नहीं जब लोग पानी के लिए तरसने लेंगे। ऐसी समस्याओं से निपटने का तरीका जनसंख्या नियंत्रण ही है।

बढ़ती हुई जनसंख्या का दबाव ही है जिसकी वजह से पृथ्वी का तापमान लगातार बढ़ता जा रहा है। सक्षम लोग अपनी जरूरत के लिए एयर कंडीशनर खरीदते हैं और उससे जो बाहर गरम हवा निकलती है उससे तापमान में लगातार वृद्धि होती है देश में जनसंख्या वृद्धि के दबाव के कारण ही हर साल लाखों वाहन लोग खरीदते हैं। जब वाहन सड़कों पर चलते हैं तो उनमें से निकलने वाली कार्बन मोनो-ऑक्साइड के कारण तापमान में लगातार वृद्धि रहती है और अगर यह जनसंख्या वृद्धि नहीं रुकी तो ये सब उपरोक्त चीजें लगातार चलती रहेंगी और हमारे लिए आगे और ज्यादा मात्रा में परेशानी का कारण बनती जाएंगी।

● *महेश लोधी, सासनी गेट अलीगढ़*

चौपाल

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com